Research Paper E-ISSN NO : 2455-295X | VOLUME : 8 | ISSUE : 3 | MARCH 2022

तलाश: नारी अस्मिता एवं अस्तित्व की

डॉ. कविता [1]

[1] 91, 'नीहार कुंज', आदित्य द्वारकाधीश वैली, खारड़ा रणधीर, जोधपुर - 342015.

ABSTRACT:

-

KEYWORDS:

-

नारी तुम आस्था हो, तुम प्यार और विश्वास हो।

टुटी हुई उम्मीदों की एकमात्र आस हो।

अपने परिवार के प्रत्येक जीवन का तुम आधार हो।

मनुष्य जीवन का महत्वपूर्ण पक्ष है 'नारी जीवन' इसके बिना मनुष्य का जीवन अपूर्ण है और मनुष्य जीवन को चित्रित करने वाला साहित्य भी इसकी उपेक्षा नहीं करता। नारी और पुरूष की परस्पर पूरकता की कल्पना का वर्णन पुराणों में मिलता हैं। अपनी विविध भूमिकाओं के द्वारा नारी, पुरूष का जीवन सुन्दर एवं सुसम्पन्न बनाती हैं। भारतीय संस्कृति का केन्द्र नारी ही रही है। भारत में नारी को प्रकृति रूपा माना गया है। प्रकृति और पुरूष के संयोग से ही सृष्टि होती है। 'मान सम्मान' रूपी रथ इन्हीं दो पहियों के बल पर अग्रसर होता हैं।

स्त्री अस्मिता और अस्तित्व क्या है ? इस प्रश्न के उत्तर से पहले 'अस्मिता' क्या है ? इस प्रश्न का उत्तर देना आवश्यक है।

भार्गव आदर्श हिन्दी शब्दकोश के अनुसार अस्मिता के अर्थ– आत्मश्लाघा अर्थात् अपने मुँह अपने गुणों का वर्णन करना, दूसरा अर्थ– अंहकार अर्थात् खुद पर घमण्ड करना और तीसरा अर्थ–मोह है। व्यक्ति की सोच– मैं कौन हूँ ? इस समाज में मेरी विशिष्ट पहचान क्या है ?

अस्मिता केवल स्त्री ही नहीं बल्कि किसी भी वर्ग, जाति, परिवार, वंश, समुदाय, क्षेत्र, संस्था यहाँ तक की राष्ट्र के स्वयं को उत्पीड़ित होने का भाव से ही शुरूआत होती है।

सच्चे अर्थों में अस्मिता एक मनःस्थिति है जो मनुष्य के विकासक्रम में मानवीय भूमिका को उसकी आन्तरिक व बाह्य चेतना के साथ रेखांकित करती है।

'स्त्री अस्मिता' आखिर है क्या ? स्त्री का अस्तित्व उसकी पहचान। एक स्त्री के अस्तित्व उसकी पहचान के मानक क्या है ? मूल्यांकन कौन करेगा स्त्री या पुरूष ? महादेवी वर्मा का कथन बिल्कुल सटीक है– "हमें न किसी पर जय चाहिए, न किसी से पराजय, न किसी पर प्रभुता चाहिए, न किसी का प्रभुत्व, केवल अपना वह स्थान, वह स्वत्व चाहिए जिनका पुरूषों के निकट कोई उपयोग नहीं है परन्तु जिनके बिना हम समाज का उपयोगी अंग बन नहीं सकेगी।"[1] स्त्री का स्त्री होने की नियति। परवश होने की विवशता और पुरूष सत्ता से मुक्त होने का भाव स्त्री विमर्श या अस्मिता का मूल स्वरूप है।

महिलाओं को उनका सही स्थान मिले इसकी पहली शर्त– समानता के धरातल पर न्याय और यथार्थ के धरातल पर समानता स्थापित हो तभी विश्व की 'आधी आबादी' समाज, राष्ट्र व विश्व के प्रभावी विकास क्रम में अपना अमूल्य योगदान देगी और सकारात्मक परिणाम भी सामने आएंगे। जब तक नारी को "यत्र नार्यस्तु पूज्यते रमन्ते तत्र देवता" (नारी सुलभ गुण) और "खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी (बहादुरी वाला पौरूषीय गुण)"[2] का दोहरा भाव बना रहेगा तब तक स्त्री व पुरूष अपना–अपना स्वतंत्र अस्तित्व नहीं तलाश पाएंगे।

"भारतीय नारीवाद भारत की प्रबुद्ध नारियों और विचारकों के चिन्तन की उपज है।"[3] भारतीय साहित्य में स्त्री विमर्श की ओजस्वी स्वरधारा वैदिक युग से आगे बढ़कर बौद्धकालीन थेरी गाथा से निकलकर भक्ति आंदोलन के सन्दर्भ में आलवार भक्तों में आन्दाल, 12 वीं सदी में कर्नाटक की अक्क महादेवी, मीराबाई, नवजागरण काल से होकर वर्तमान स्त्री मुक्ति आन्दोलन तक अविराम गति से उछलती मचलती पुरूष प्रधान सत्ता रूपी चट्टान से टकराकर अपना अलग रास्ता बनाने में सक्षम रही है।

प्राचीनकाल में नारी अस्मिता–

स्त्री अस्मिता का सर्वाधिक सशक्त रूप वैदिक युग में देखने को मिलता है। यह युग मातृसत्ता प्रधान युग था। यहाँ स्त्रियाँ पठन–पाठन ही नहीं बल्कि वेद ऋचाओं की रचना भी करती थी। लोपामुद्रा, मैत्रेयी, गार्गी इत्यादि विदुषी स्त्रियाँ इस युग में हुई थी। स्वयंवर की प्रथा के साथ गार्हस्थ जीवन में स्त्री का जीवन गरिमापूर्ण था।

बौद्धकालीन नारी–

थेरी गाथा नारी स्वतंत्रता को प्रकट करने वाला दस्तावेज है। भिक्षुणी सुमंगला माता भिक्षुणी बनने के पहले व बाद के अनुभव इस प्रकार है–

"अहो! मैं मुक्त नारी! मेरी मुक्ति कितनी धन्य है!

पहले मैं मूसल लेकर धान कूटा करती थी आज उससे मुक्त हुई। मेरी दरिद्रावस्था के वे छोटे–छोटे बर्तन जिनके बीच में मैं मैली–कुचली बैठती थी और मेरा निर्लज्ज पति मुझे उन छातों से भी तुच्छ समझता था जिन्हें वह अपनी जीविका के लिए बनाता था अब उस जीवन की आसक्तियों और मलों को मैंने छोड़ दिया मैं आज वृक्ष मूलों में ध्यान करती हुई जीवन–यापन करती हूँ।

अहो! अब मैं कितनी सुखी हूँ..... ।"[4]

इस युग के पश्चात् स्त्रियों की दशा–

इसमें स्त्रीमुक्ति का आधार केवल 'भक्ति' को बताया। मनुसंहिता, धर्मसूत्र, अर्थशास्त्र जैसे ग्रन्थों में मिलते हैं।

मध्यकाल में नारी अस्मिता–

आठवीं शताब्दी में मुस्लिम शासकों ने भारत भूमि पर कदम रखा जो 19 वीं सदी तक जड़ जमाए रहा। इस कालावधि में भारतीय नारी की दशा और दिशा शोचनीय हो गई थी (बाल विवाह, पर्दा प्रथा, बेमेल विवाह, सतीप्रथा इत्यादि कुरीतियों के कारण)।

आधुनिक काल में नारी अस्मिता–

19 वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में भारतीय समाज में नारी की स्थिति अत्यन्त दयनीय हो चुकी थी। भारत में पाश्चात्य शिक्षा के प्रभाव से पुनर्जागरण हुआ फलस्वरूप सामाजिक सुधार आन्दोलन अस्तित्व में आए। राजा राममोहन राय, ईश्वरचन्द विद्यासागर, महादेव गोविन्द रानाडे, ज्योतिबा फूले, सावित्री बाई फूले, दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानन्द इत्यादि समाज सुधारकों ने आवाज उठाई और महिलाओं को विभिन्न सामाजिक रूढ़ियों बन्धनों से मुक्त कराकर उन्हें उनका हक दिलाया लेकिन समस्या पूर्णरूपेण हल नहीं हो सकी क्योंकि पुरूषों ने इस आन्दोलन को आगे तो बढ़ाया लेकिन पितृसत्तात्मक ढाँचे को सुरक्षित रखते हुए सुधार की कोशिश की (पितृसत्तात्मक ढांचा अर्थात् समाज के सभी पक्षों में आर्थिक, सामाजिक,

वैधानिक और धार्मिक व्यवस्था मूल्यों तथा आदर्शों, विचारधाराओं इत्यादि में पुरूषों को प्रधानता देना) स्त्री की छवि अपने अनुसार गढ़कर।

पश्चिम में स्त्री विमर्श की शुरूआत का श्रेय सीमोन द बोउवार को जाता है जिन्होंने बुक 'द सेकेण्ड सेक्स'[5] लिखकर पितृसत्तात्मक समाज में तहलका मचा दिया और परम्परागत सामाजिक संरचना को चुनौती दे डाली।

वर्ष 1947 में कलकत्ता कांग्रेस में तीन स्त्रियाँ एनी बीसेन्ट, अम्मन बीबी व सरोजनी नायडू महत्वपूर्ण पदों पर थी, भारत के सामाजिक तथा राजनीतिक इतिहास में ये तीन स्त्रियाँ नवयुग के आरम्भ की सूचक थी। स्वतंत्रता के पश्चात् नारी मुक्ति की चेतना नवीन संकल्पनाओं के साथ स्वयं नारी ने विकसित की। बीसवीं सदी भारतीय नारी के लिए नवजागरण का संदेश लेकर आई अब नारी पुरूष की बलात् दासता को अस्वीकार कर अपने अधिकारों के प्रति सजग हो गई। भारतीय कानून ने भी नारी के स्थान को सुरक्षित किया। डॉ. अम्बेडकर ने भारतीय संविधान में नारी मुक्ति के लिए अनुच्छेद 15(1) द्वारा लिंग के आधार पर किए जाने वाले भेद को समाप्त किया और अनुच्छेद 14 द्वारा नारी को पुरूष के समान बराबरी का दर्जा दिलवाया एवं समान कार्य के लिए समान वेतन दिलाने की व्यवस्था की।

किसी ने ठीक ही कहा है कि किसी देश के सांस्कृतिक स्तर का पता लगाना है तो पहले यह देखो कि वहाँ स्त्रियों की अवस्था कैसी है ? रमणिका जी गुप्ता लिखती है– ''सही मायने में स्त्री अस्मिता का अर्थ होगा स्त्री के प्रति समाज के दृष्टिकोण और मानसिकता में बदलाव जिसमें स्त्री का खुद का दृष्टिकोण भी शामिल हो।''[6]

भारतीय समाज में स्त्री अस्मिता का प्रश्न आधुनिक चेतना का प्रतीक है। मानव समाज में मनुष्यता को बनाए रखना जरूरी है तभी स्त्री अपने स्थानीय और निजी अनुभवों से स्वयं की भागीदारी सुनिश्चित कर पाएगी। इस संबंध में स्वामी विवेकानन्द जी का कथन– ''जब तक महिलाएँ स्वयं अपने विकास के लिए आगे नहीं आएगी तब तक उनका विकास असंभव हैं।'' परम्परा से स्त्री पारिवारिक बन्धनों में बंधी हुई है– स्त्री विमर्श का मूल स्वर यही है कि स्त्रियाँ इन बंधनों का निषेध करे और अपने व्यक्तित्व की सीमाओं को विस्तार दे तथा लैंगिक असमानता (स्त्री–पुरूष) का प्रचार करने वाली चेतना को चुनौती देते हुए उससे आगे बढ़े। पिछले कुछ दशकों से स्त्री ही नहीं बल्कि पुरूष भी आगे आए और अस्मिता आन्दोलन (पूर्णतः अहिंसक) से जुड़े है। भारत के साथ वैश्विक स्तर पर काफी बड़ा बदलाव आया है। महिलाओं को मिले सम्मान के उपरांत भी ये दो भागों में विभक्त है– एक तरफ एकदम दबी कुचली, अशिक्षित और पिछड़ी महिलाएँ है तो दूसरी तरफ प्रगति पथ पर अग्रसर महिलाएँ। कई मामलों में तो पुरूषों से भी आगे नई ऊँचाइयाँ छूती महिलाएँ विश्व को गौरवान्वित कर रही हैं।

समसामयिक परिस्थितियाँ–

हर युग की परिस्थितियों का तत्कालीन साहित्य पर प्रभाव पड़ता है। साहित्यकार की अभिव्यक्ति एवं उसके कल्पना के रंग समाज की ही देन है। साहित्य में स्त्री विमर्श अस्मिता का वह आन्दोलन है जो हाशिए पर छोड़ दिए गए नारी अस्तित्व को फिर से केन्द्र में लाने और उसकी मानवीय गरिमा को प्रतिष्ठित करने का अभियान है। समाज में स्त्री को एक जीवंत मानवीय इकाई के रूप में स्वीकारने का प्रयास है।

वर्ष 1975 को अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष घोषित किया गया। भारत के संदर्भ में भी यह ऐतिहासिक काल रहा है। समाज के सभी क्षेत्रों में जब महिला सशक्तिकरण का दौर शुरू हुआ तो साहित्य का क्षेत्र अछूता कैसे रह सकता था ? साहित्य में विशेषकर स्त्री–रचनाकारों ने जो समाज स्त्री को संवाद या विवाद का अवसर नहीं दे रहा था, स्त्री लेखन ने समाज की संकीर्ण मानसिकता से टकराने का जोखिम भरा कार्य किया। आज हिन्दी में स्त्री लेखन साहित्य समृद्ध एवं विस्तृत है। आज का लेखन अनुभव जन्य है, स्त्री मन की व्यथा, आकांक्षा और त्रासदी का जीवंत चित्रण भोगा हुआ यथार्थ है। वर्तमान वैश्विक युग में स्त्री को दोहरी लड़ाई लड़नी पड़ रही है (विरोधी स्थितियों में खड़े होना व बने रहना) अतः उसके लिए ज्यादा तार्किक दृष्टिकोण, गंभीर मानसिकता के साथ दृढ़ व्यक्तित्व की क्षमता अपेक्षित हैं।

REFERENCES

1. महादेवी वर्मा – शृंखला की कड़ियाँ, पृ. सं. 23–24।

2. निवेदिता मेनन – नारीवादी राजनीति संघर्ष एवं मुद्दे दिल्ली विश्वविद्यालय, पृ. सं. 9।

3. डी.के.एम. मालती – स्त्री विमर्श : भारतीय परिप्रेक्ष्य भारतीय नारीवाद की अवधारणा, पृ. सं. 153।

4. थेरी गाथा – भिक्षुणी सुमंगला माता के अनुभव।

5. सीमोन द बोउवार – द सेकेण्ड सेक्स।

6. रमणिका गुप्ता – स्त्री विमर्श : कलम और कुदाल के बहाने, पृ. सं. 55।